Original Article
ISSN (Online): 2582-7472

ShodhKosh: Journal of Visual and Performing Arts
January-June 2023 4(1), 4266–4270

HINDU NEW YEAR CELEBRATION AND INDIAN CALENDAR

हिन्दू नवसंवत्सर अभिनन्दन एवं भारतीय कालगणना

Dr. Kanta [1], Dr. Uma Shankar [2]

[1] Assistant Professor (Ad-hoc), Sanskrit Department, School of Open Learning, Delhi University, Delhi, India
[2] Associate Professor, Sanskrit Department, Delhi University, Delhi, India

Received 20 October 2023
Accepted 16 January 2023
Published 20 January 2023

Corresponding Author
Dr. Kanta,
kantadhankhar15@gmail.com

DOI
10.29121/shodhkosh.v4.i1.2023.5129

Funding: This research received no specific grant from any funding agency in the public, commercial, or not-for-profit sectors.

Copyright: © 2023 The Author(s). This work is licensed under a Creative Commons Attribution 4.0 International License.

With the license CC-BY, authors retain the copyright, allowing anyone to download, reuse, re-print, modify, distribute, and/or copy their contribution. The work must be properly attributed to its author.

OPEN ACCESS

ABSTRACT

English: 'Nav Samvatsar Abhinandan' has special importance in India, the land of festivals. The Shukla Pratipada of Chaitra month is also celebrated as Varsha Pratipada or Yugadi. In fact, all festivals are representative of Indian cultural treasure. These are actually symbols of recollection of historical events, which not only awakens the sense of consciousness towards cultural traditions, but also strengthens the sense of faith, trust and respect towards festivals. Regarding the beginning of Hindu Navsamvatsar or New Year, there is mention of various theories of chronology accepted from Vedic era and many incidents that happened on the scene of Indian history. For example, Pitamah Brahma started the creation from this day, the beginning of the present Kaliyug is also considered to be on this day. This is reflected in many other forms like the beginning of Navaratri, beginning of new Panchang etc.

Hindi: उत्सवों की भूमि भारत में 'नवसंवत्सर अभिनन्दन' का विशेष महत्त्व है। चैत्र मास की शुक्ल प्रतिपदा को वर्ष प्रतिपदा अथवा युगादि के नाम से भी मनाया जाता है। वास्तव में सभी पर्व-उत्सव भारतीय सांस्कृतिक निधि के परिचायक हैं। ये वस्तुतः ऐतिहासिक घटनाओं की पुनःस्मृति के प्रतीक हैं, जिससे संस्कृतिगत परम्पराओं के प्रति चेतना का भाव तो जागृत होता ही है, साथ ही उत्सवों के प्रति आस्था, विश्वास एवं सम्मान की भावना और अधिक पुष्ट होती है। हिन्दू नवसंवत्सर या नववर्ष के प्रारम्भ के विषय में भी वैदिक युग से स्वीकृत कालगणना के विविध सिद्धान्त एवं भारतीय इतिहास के पटल पर घटित अनेक घटनाओं का उल्लेख आता है। यथा— पितामह ब्रह्मा ने सृष्टि का प्रारम्भ इसी दिन से किया था, वर्तमान कलियुग का प्रारम्भ भी इसी दिन को माना जाता है। नवरात्ररम्भ, नए पंचांगके आरम्भ आदि कई अन्य रूपों में यह परिलक्षित होता है।

Keywords: Navsamvatsar, Panchang, Kalandhar, Sayan, Nirayan, Sankranti, Solar Time, Spring Equinox, Equinox Day, Beej Sanskar, नवसंवत्सर, पंचांग, कालन्धरः, सायन, निरयण, संक्रान्ति, सौरमान, वसन्त सम्पात, विषुवदिन, बीजसंस्कार

1. प्रस्तावना

1.1. भूमिका

हमारे दैनिक व्यवहार में दिन, रात, तिथि, मास, पक्ष, ग्रहण, सूर्योदय और सूर्यास्त, ऋतु-आरम्भ, वर्षारम्भ, संक्रान्तियाँ इत्यादि का महत्त्व आज भी है और प्राचीन काल में भी था। प्रारम्भ में दिन-रात का बार-बार होना, चन्द्रमा का घटना-बढ़ना एवं ऋतुओं का बार-बार उसी क्रम में आना - इन सब घटनाओं पर मानव का ध्यान गया और उसने समय की इकाईयों को यथासम्भव व्यवस्थित करने का प्रयास किया। फलतः प्राचीन समय से ही मनुष्य ने अपनी-अपनी आवश्यकता एवं रीति के पंचांगनिर्धारित किए। पंचांगों में पर्याप्त सूक्ष्मता एवं प्रामाणिकता की अपेक्षा होने के कारण परवर्ती काल में वेदांगज्योतिष, सूर्य-सिद्धान्त जैसे अनेक सिद्धान्त ग्रन्थों की रचना हुई, जिनमें ग्रह-गतियों की सूक्ष्म रीतियाँ बताई। तत्कालीन आर्यभट्ट, वराहमिहिर,

ब्रह्मगुप्त, भास्कराचार्य प्रभृति ज्योतिर्विदों ने पंचांगविषयक सिद्धान्त प्रस्तुत कर पंचांगनिर्माण पद्धति को वैज्ञानिक आधार प्रदान किया। अतः स्पष्ट है कि गणित का सर्वाधिक उपयोग पंचांगअथवा कैलेण्डर निर्माण में होता है। पंचांगसे सम्बद्ध विवरण इस प्रकार है—

भारतीय पंचांग—काल, जिसके द्वारा समस्त ब्रह्माण्ड शासित है[i], ज्योतिष शास्त्र की समस्त गणना का आधार भी यही काल है, जिसे व्यावहारिक जगत में दिन, रात, ऋतु, मास, संवत्सर आदि के रूप में देखा जाता है।[ii] श्वेताश्वतरोपनिषद्[iii] के टीकाकार शंकरानन्द ने काल को व्यवहार का आधार मानते हुए वर्तमान, भूत एवं भव्य आदि के रूप में स्वीकार किया है। पाणिनि के सूत्रों में काल को संवत्सर[iv], अयन[v], ऋतु[vi], मास[vii] आदि शब्दों से अभिहित किया है। इसी काल-गणना को एक ईकाई के रूप में व्यवस्थित विधि से बाँधना पंचांगकहलाता है अर्थात् पंचांग, काल निर्णय की प्राचीन पद्धति पर आधारित एक ऐसा गणित है, जो आकाशीय ग्रहों की स्थिति सुनिश्चित करता है। आकाश में होने वाली अनेक घटनाओं जैसे ग्रहों के उदयास्त, ग्रहण इत्यादि के विषय में गणना करता है। पंचांगको आधुनिक भाषा में एफेमेरिस एवं कैलेण्डर भी कहा जाता है। अंग्रेजी का कैलेण्डर शब्द संस्कृत भाषा के 'कालन्धरः' शब्द का अपभ्रंश है अर्थात् जो काल वा समय को धारण करता है अथवा जिससे काल के अवयवों का ज्ञान होता है, उसे कैलेण्डर अथवा पंचांगकहते हैं।[viii]

सिद्धान्तदर्पणकार के अनुसार समय की वह अवधि जो युग से प्रारम्भ होकर अद्यपर्यन्त भूतकाल की गणना कराती है, वह कैलेण्डर अथवा पंचांगकहलाती है।[ix] अन्य विद्वानों द्वारा पंचांगों के समन्वित रूप को पंचांगकहा जाता है।[x] पाँच अंगइस प्रकार है—तिथि, वार, नक्षत्र, योग एवं करण।

1) **तिथि—**आकाश में सूर्य और चन्द्रमा के एकत्र होने पर अमावस्या होती है, तदनन्तर गति अधिक होने के कारण चन्द्रमा सूर्य से आगे निकल जाता है। दोनों में 12 अंश का अन्तर पड़ने में जितना समय लगता है, उसे तिथि कहते हैं।[xi] तिथियाँ 30 होती हैं। 15 तिथियाँ शुक्ल पक्ष में, जिसमें अन्तिम तिथि पूर्णिमा होती है तथा 15 कृष्ण पक्ष में, जिनमें अन्तिम तिथि अमावस्या होती है।[xii]
2) **वार—**एक सूर्योदय से दूसरे सूर्योदय तक के समय को वार कहते हैं। यह रविवारादि क्रम से सात हैं। वार के पर्यायवाची अवसर तथा वासर हैं। जो लोगों को सुखपूर्वक वसाता है या सुगन्धित करता है, उसे वासर कहते हैं। ऋग्वेद[xiii] में वासर शब्द का उल्लेख दिवस अर्थ में दो स्थानों पर उपलब्ध होता है।
3) **नक्षत्र—**नक्षत्रमण्डल 800-800 कलाओं के बराबर 27 भागों में विभाजित है, प्रत्येक भाग का चक्कर लगाने में चन्द्रमा का जितना समय लगता है, वह एक नक्षत्र है। नक्षत्रों की संख्या 27 है।
4) **योग—**सूर्य और चन्द्रमा के भोगांशों के योगफल द्वारा योग ज्ञात किया जाता है। ये भी 27 होते हैं। सूर्यसिद्धान्त[xiv] में व्यतिपात एवं वैधृति नामक योगों की व्याख्या प्राप्त होती है।
5) **करण—**सूर्य और चन्द्रमा में छः अंश का अन्तर पड़ने में जो समय लगता है, उसे करण कहते हैं। यह तिथि का आधा होता है।[xv] चर एवं स्थिर भेद से करण ग्यारह होते हैं।

उक्त पाँच अंगों के अतिरिक्त कैलेण्डर में दिनमान, सूर्योदय-सूर्यास्त, ग्रहण, चन्द्रोदय, अंग्रेजी तारीख, मुस्लिम रोज, राष्ट्रीय दिनांक, ग्रहों की आकाशीय स्थितियाँ, पर्व एवं उत्सव आदि भी समाविष्ट रहते हैं।

2. भारतीय पंचांगपद्धति

पंचांगभारतीय हिन्दू समाज की रीढ़ है, चूंकि धर्मशास्त्रेक्त व्रत, पर्व एवं त्योहारों का निर्धारण पंचांगके बिना सम्भव नहीं है। किन्तु क्षेत्रीय आवश्यकताओं तथा धार्मिक तिथियों की गणना हेतु वर्तमान में देश में सैंकड़ों पंचांगप्रचलन में हैं। विभिन्न प्रचलित पंचांगों पर सूक्ष्म दृष्टिपात करने के पश्चात् निर्माण की दो पद्धतियाँ दृष्टिगोचर होती हैं—

1) **सायन पद्धति**
2) **निरयण पद्धति**

1) **सायन पद्धति**—सायन का अर्थ है—गति सहित। जब सूर्य की मकर राशि में संक्रान्ति होती है, उसे उत्तरायण कहा जाता है तथा जब सूर्य की कर्क राशि में संक्रान्ति होती है, उसे दक्षिणायन कहते हैं। इसके अतिरिक्त वर्ष में दो बार दिन-व-रात बराबर होते हैं, उन्हें वसन्त सम्पात एवं शरद् सम्पात कहा जाता है। अतः क्रान्तिवृत्त के ये चार बिन्दु मुख्य हैं। आकाश में ग्रहों की स्थिति बताने के लिए वसन्त-सम्पात को प्रारम्भ बिन्दु माना गया है तथा एक वसन्त सम्पात से दूसरे वसन्त सम्पात तक के समय को एक वर्ष माना गया है। चूंकि सम्पात गतिमान है, इसलिए इसे सायन वर्ष कहा है। वसन्त सम्पात से आरम्भ कर क्रान्तिवृत्त के 27बराबर भाग किए हैं, जिन्हें अश्विन्यादि सायन नक्षत्र कहा गया है तथा समान 12 भाग करके उन्हें मेषादि सायन राशि कहा है। सायन पद्धति में वसन्त सम्पात से ही वर्षारम्भ, अश्विनी नक्षत्र और मेष राशि का प्रारम्भ बिन्दु मानकर ग्रहों की स्थिति बताई है, वहाँ तारात्मक नक्षत्र चाहे जो हो। इसी प्रकार सायन राशियों में सूर्य के प्रवेश को संक्रान्ति कहा है और उसी के अनुसार चान्द्रमासों के नाम रखे हैं। जिस चान्द्रमास में सायन मेष संक्रान्ति होती है अर्थात् वसन्तसम्पात में सूर्य जाता है, उसे

चैत्र कहा है। इसी प्रकार वैशाखादिकों की भी व्यवस्था की है। इस पद्धति से चैत्र में सर्वदा वसन्त ऋतु रहेगी, आर्द्रा नक्षत्र में वर्षा आरम्भ होगी और इसी प्रकार सब ऋतुएँ नियमित मासों में होंगी।

ऊपर कही गई समस्त सायन गणना को आधार बनाकर जिन पंचांगों का निर्माण किया जाता है, वे सायन पंचांगकहलाते हैं। अन्य शब्दों में, सम्पात को आरम्भ स्थान मानकर ग्रहों की वास्तविक स्थिति की गणना करने पर जो लब्धि होती है, वह ग्रहस्थिति सायन कही जाती है। इसी के अन्तर्गत अयनांश भी समाहित होते हैं अर्थात् सायन पंचांगों का अन्य पंचांगों से दो विषयों में भेद होता है। एक तो सायन पंचांगका वर्षमान भिन्न रहता है और उसमें अयनांश शून्य रहता है। दूसरा, सायन पंचांगअत्यन्त सूक्ष्म वेधों पर आधारित इंगलिश नॉटिकल आत्मनाक द्वारा अथवा समय का ज्ञान (कालज्ञान) नामक फ्रेंच पंचांगके आधार पर बनाया जाता है। इस प्रकार से सायन पंचांगकी ग्रह स्थिति दृक्प्रत्ययद होती है। आधुनिक समय में बापूदेवशास्त्री, बालगंगाधर तिलक, विसाजी रघुनाथ लेले एवं जनार्दन बालाजी मोडक सायन पंचांगके प्रबल समर्थक माने जाते हैं।

3. सायन-पद्धति का वैशिष्ट्य

1) **तार्किक दृष्टि से**—(1) जैसे दिन की गणना का साधन सूर्योदय और मासगणना का साधन चन्द्रमा का पूर्ण या अदृश्य होना है, उसी प्रकार वर्षगणना का स्वाभाविक साधन ऋतुओं की एक परिक्रमा है, पर ऋतुओं की उत्पत्ति का कारण सूर्य है, अतः वर्ष सौर मानना चाहिए और चूंकि ऋतुएँ सायन सूर्य के अनुसार होती हैं, अतः वर्ष भी सायन सौरमान का मानना चाहिए।

(2) 12 चान्द्रमासों में ऋतुओं की एक पूर्ण परिक्रमा नहीं होती, इसलिए बीच में अधिमास डालना पड़ता है। अर्थात् यदि अधिमास का प्रक्षेपण न किया जाए तो जैसे मुस्लिमों का मुहर्रम 33 वर्षों में सब ऋतुओं में घूम जाता है, उसी प्रकार 33 वर्षों में चैत्र में क्रमशः सभी ऋतुएँ आ जाया करेंगी। अतः सिद्ध है कि अधिमास मानने का केवल यही उद्देश्य है कि किसी भी मास में सर्वदा एक ही ऋतु रहे। जैसे अधिमास न मानने से 33 वर्षों में प्रत्येक मास में सभी ऋतुएँ आ जाती हैं, उसी प्रकार नाक्षत्र (निरयण) वर्ष मानने से लगभग 26000 वर्षों में एक ही मास में क्रमशः सब ऋतुएँ आ जाएंगी। अतः सायन मान ग्राह्य है।

2) **ऐतिहासिक दृष्टि से**—(1) वेदकाल में—सायन वर्षमान नैसर्गिक है, प्रायः वेदकाल में सायनमान का ही प्रचार था। मधु, माधव इन संज्ञाओं से पूर्व अधिमास का प्रक्षेपण इसी बात की ओर संकेत करता है कि ऋतुओं के पर्यय हेतु इसका विधान किया गया, भले ही वह स्थूल रूप में प्रचलित रहा।[xvi]

(2)वेदांगकालीन अधिकांश ग्रन्थों में वसन्त के आरम्भ में वर्षारम्भ का वर्णन है, अतः उस समय भी सायन वर्ष ग्राह्य माना जाता था।

(3)ब्रह्मगुप्त विषुवदिन से सौरवर्ष का प्रारम्भ मानते थे अतः उन्हें भी सायन वर्ष ही मान्य था।

(4)आधुनिक पंचांगकार बापूदेव शास्त्री का कथन है कि वस्तुतः सायन गणना ही ठीक है, परन्तु इस देश में सर्वत्र निरयण का प्रचलन है। उन्होंने दृक्गणना पर आधारित निरयण पंचांगकाशी से प्रकाशित करना प्रारम्भ किया।

(5)सन् 1954 में डॉ. मेघनाद साहा की अध्यक्षता में भारत सरकार ने एक पंचांगसुधार समिति की स्थापना की थी। इस समिति ने विविध पहलुओं पर विचार करने के बाद दृग् गणना पद्धति अर्थात् सायन पद्धति को ही सर्वथा शुद्ध स्वीकार किया है।

3) **निरयण पद्धति**—निरयण पद्धति में उपर्युक्त वसन्त सम्पात को प्रारम्भबिन्दु न मानकर रेवती इत्यादि किसी स्थिर नक्षत्र तारे को प्रारम्भबिन्दु मानते हैं, अधिकांशतः सिद्धान्त ग्रन्थों में बताए गए किसी स्थिर तारे से प्रारम्भ बिन्दु मानते हैं तथा वहीं से क्रान्तिवृत्त के जो 12 भाग किए जाते हैं, उन्हें स्थिर या निरयण राशि और जो 27 भाग किए जाते हैं, उन्हें निरयण नक्षत्र कहते हैं। चूंकि सिद्धान्त ग्रंथों में आरम्भस्थान अर्थात् नक्षत्र भोग स्थिर माने गए हैं, इसलिए स्थिर तारे से ही निरयण वर्ष निर्धारित कर ग्रहों की गतिस्थिति वर्णित है। अतः निरयण ग्रहों के आधार पर निर्मित पंचांगको निरयण पंचांगकहा जाता है। सभी निरयण पंचांगकिसी-न-किसी सौर, ब्राह्म एवं आर्यपक्षीय ग्रन्थों को आधार बनाकर ही निर्मित किए जाते हैं। प्रारम्भ से ही भारत में निरयण पंचांगों का सर्वाधिक प्रचलन रहा है, आज भी है।

वर्तमान समय में सर्वाधिक निरयण पंचांगग्रहलाघव, करणकुतूहल एवं केतकीग्रहगणित को आधार मानकर बनाए जाते हैं, यथा—भारतीय दक्षिण प्रान्तों में ग्रहलाघवीय पंचांगका प्रचलन है, गुजरात के सभी क्षेत्रों में भी ग्रहलाघवीय पंचांगका प्रचार है एवं उत्तरी भारत के कुछ स्थानों में मकरन्दीय पंचांगका प्रचलन है।

परन्तु विडम्बना यह है कि वर्तमान समय में देश में प्रायः सभी प्रान्तों में प्रचलित ग्रहलाघवीय, मकरन्दीय इत्यादि निरयण पंचांगों में प्रतिपादित ग्रहगतिस्थिति आकाश में प्रत्यक्षतः दृक्सिद्ध नहीं होती। इसके अतिरिक्त इन पंचांगों के वर्षमान तथा अयनांश में भी पर्याप्त वैभिन्न्य दृष्टिगोचर होता है। परिणामस्वरूप इन सभी निरयण पंचांगों की विभिन्न गणनाओं यथा तिथि, नक्षत्र, योग और करण के घटी-पलों में एवं संकान्तिकाल, वर्षारम्भ, मासारम्भ इत्यादि में भी भेद उपलब्ध होता है। तात्पर्य यह है कि निरयण पंचांगश्रुतिस्मृतिपुराणविहितकालदर्शक न होने के कारण अत्यन्त विचारास्पद हो गए हैं।

यहाँ प्रश्न यह है कि दोनों में से कौन सी पद्धति ग्राह्य है।

पूर्वाचार्यों की यह परम्परा रही है कि वे दृक्गणितैक्ययुक्त सिद्धान्तग्रन्थों में समय के भेद तथा काल गति से ग्रहों के गणित में अन्तर आने पर उसमें सूक्ष्म वेधयंत्रों से प्रत्यक्ष वेध द्वारा बीजसंस्कार करते आए है। बीजसंस्कार करने वाले अन्तिम आचार्य गणेश दैवज्ञ स्वीकार किए गए हैं। परन्तु उनके

लगभग 400-500 वर्ष पश्चात् ग्रहों की स्थितियों में पर्याप्त अन्तर आ चुका था। इसलिए वेंकटेश केतकर ने वेध द्वारा ग्रहलाघव के गणित को दृक्प्रत्ययद् बनाने हेतु केतकीग्रहगणित ग्रन्थ की रचना की, जिसके प्रारम्भ में उन्होंने बीजसंस्कार के बारे में बताया है।[xvii]

अतः वर्तमान में जो दृक्सिद्धनिरयणपद्धति को आधार बनाकर पंचांगों का निर्माण कहीं-कहीं प्रचलन में हैं, वस्तुतः यही पद्धति श्रेष्ठ एवं शास्त्रसम्मत है चूंकि पंचांगों में गणित का दृक्तुल्य होना अत्यन्त आवश्यक होता है। भास्कराचार्य[xviii] को भी यही मत अभिप्रेत है।

4. हिन्दू नवसंवत्सर-उत्सव

भारतीय नववर्ष विक्रम् संवत्सर अथवा चैत्र मास के शुक्ल पक्ष की प्रतिपदा से प्रारम्भ होता है। यद्यपि नव वर्ष का नाम आते ही हमारे मानस पटल पर एक जनवरी अंकित हो जाता है, चूंकि दैनन्दिन व्यवहार में हम ग्रेगोरियन या अंग्रेजी कैलेण्डर का प्रयोग करते हैं, तथापि पर्व, उत्सव, त्योहार, विवाह एवं निजी कार्यों के लिए हम हिन्दू पंचांग का ही उपयोग करते हैं। भारत में कई पंचांगइस समय प्रचलित हैं, जिनमें विक्रम संवत् और शक् संवत् प्रमुख हैं, जिनके आधार क्रमशः चान्द्रमान एवं सौरमान हैं।

विक्रमसंवत् में वर्षारम्भ चैत्र से होता है तथा मास की गणना पूर्णिमा से पूर्णिमा होती है। यह बंगाल व गुजरात को छोड़ समस्त उत्तरी भारत में प्रचलित है।

जबकि शक् संवत् में वर्षारम्भ अधिकांशतः मेष संक्रान्ति से होता है, कहीं-कहीं चैत्र से होता है। चान्द्रमासों की गणना अमावस्या से अमावस्या तक होती है। सम्पूर्ण दक्षिण भारत में शक् संवत् का ही प्रचलन है। अतः यहाँ दोनों में पन्द्रह दिन का अन्तर पड़ जाता है क्योंकि पूर्णिमान्त एवं अमान्त दोनों के शुक्ल पक्ष एक ही मास के माने जाते हैं।

5. हिन्दू नवसंवत्सर का वैशिष्ट्य

चैत्र मास में शुक्ल पक्ष की प्रतिपदा तिथि से हिन्दू नवसंवत्सर का आरम्भ होता है। इस तिथि का हमारे लिए सामाजिक, सांस्कृतिक, धार्मिक, वैज्ञानिक एवं ऐतिहासिक अनेक दष्टियों से महत्त्व है। यथा- इसी तिथि से पितामह ब्रह्मर ने सष्टि निर्माण प्रारम्भ किया था।[xix]इस तिथि का ऐतिहासिक महत्त्व भी है चूंकि इसी दिन सम्राट चन्द्रगुप्त विक्रमादित्य ने शकों पर विजय प्राप्त की थी तथा इसे चिरस्थायी बनाने के लिए विक्रम संवत् का प्रारम्भ किया था।वर्तमान कलियुग का प्रारम्भ भी इसी दिन को माना जाता है। साथ ही नवरात्ररम्भ, नए पंचांगके आरम्भ आदि कई अन्य रूपों में भी यह परिलक्षित होता है।

भारतीय प्राचीन ग्रन्थो में काल की सूक्ष्म से सूक्ष्म इकाईयों की गणना विहित है। यथा-यजुर्वेद में सूर्य व ग्रह-नक्षत्रों की गति-स्थिति एवं संवत्सरों का वर्णन किया गया है। ब्रह्मगुप्त एवं भास्कराचार्य प्रभृति गणितज्ञों ने भी अपनी रचनाओं में दिन-मास-वर्ष एवं युगादि का प्रारम्भ चैत्र शुक्ल प्रतिपदा से माना है। चैत्र-शुक्ल प्रतिपदा, वर्ष प्रतिपदा कहलाती है। इस चैत्र मास की वसन्त ऋतु में प्रकृति अपने श्रृंगार एवं सृजन की प्रक्रिया में लीन होकर मानों नव वर्ष आगमन का संदेश देती हो। सभी पेड़-पौधे पतझड़ में अपने जीर्ण-शीर्ण पत्तों को त्याग रहे होते हैं, तेज वायु उन पत्तों को उड़ाकर ले जाती हुई मानो सफाई का कार्य कर रही हो, दूसरी ओर सभी वृक्षों पर नवीन कोपलें फूटना, पलाश का खिलना, वृक्षों का पुष्पित होना, समस्त वातावरण का सुगन्धिमय होना एवं सरसों के फूलों का नृत्य करना तथा पक्षियों का कलरव- ये सब देखकर ऐसा लगता है मानों सम्पूर्ण सृष्टि नई-सी हो गई हो।

भारतीय प्राचीन ऋषियों ने सतत् अनुसन्धानों एवं प्राप्त परिणामों के आधार पर इस वैज्ञानिक एवं कालजयी नवसंवत्सर रूपी ज्ञान-विज्ञान को विकसित किया था। किन्तु दुर्भाग्यवश वर्तमान नवीन पीढ़ी को इस भारतीय श्रेष्ठ परम्परा का बोध नहीं है। यह सभी जानते हैं कि अंग्रेजी ईसवी सन् का संबन्ध ईसा मसीह से है, इसी प्रकार हिजरी सन् का संबंध मुसलमानों एवं हज़रत मुहम्मद से है। किन्तु हिन्दू नवसंवत्सर अथवा नववर्षका सम्बन्ध किसी धर्म विशेष से न होकर साक्षात् प्रकृति, खागोलीय सिद्धान्तों एवं ब्रह्माण्ड में स्थित ग्रह-नक्षत्रों की गति-स्थिति से है। इसलिए भारतीय कालगणना पंथनिरपेक्ष होने के साथ-साथ सृष्टि निर्माण तथा भारतीय संस्कृति की गौरवशाली परम्पराओं को दर्शाती है।

6. निष्कर्ष

निष्कर्षत:कहा जा सकता है कि हिन्दू नवसंवत्सर भारतीय कालगणना का आधार पर्व है जिससे पता चलता है कि भारत का गणित एवं नक्षत्र विज्ञान कितना समृद्ध रहा है।परंतुवर्तमान में हमारे देश में प्रचलित पंचांगों का गणित आकाश से मेल नहीं खाता। अतः उनकी ग्रहगति-स्थितियाँ शुद्ध की जानी चाहिए। पूर्वलिखित ज्योतिषग्रन्थों का इतिहास स्पष्ट बता रहा है कि हमारे ज्योतिषी गणितानुसार प्रत्यक्ष अनुभव होने के लिए सदा प्राचीन ग्रन्थों में बीजसंस्कार या उनमें संशोधन कर नवीन ग्रन्थ बनाते रहे हैं। पंचांगों के समन्वय के लिए हमें ऐसे कार्य करने की आवश्यकता है, जिससे सिद्धान्त ज्योतिष व वैदिक धर्मशास्त्र के विद्वानों के समन्वय से पंचांगनिर्माण में उपयोग होने वाले गणित की शुद्धता सुनिश्चित की जा सके एवं हमारी प्राचीन संस्कृति की भी रक्षा हो। साथ ही वर्तमान नई पीढ़ी में अपने नव वर्ष की वैज्ञानिकता एवं महत्ता का बोध भी हो, यह भी सुनिश्चित किया जाना चाहिए।

सन्दर्भ-सूची

[i]अथर्ववेद.; 19/53/8
[ii]सायण भाष्य; अथर्ववेद; 19/53/3
[iii]श्वेताश्वतरोपनिषद् ; शंकरानंद टीका, 1/2
[iv]संख्यायाः संवत्सरसंख्यस्य च।–अष्टाध्यायी. 7/3/15
[v]अयनं च। -वही; 8/4/25
[vi]वही; 5/1/105
[vii]वही; 2/3/28- वार्तिक-।
[viii]कात्यायन, अभय- विश्व के प्रमुख कालदर्शक, चौखम्बा सुरभारती प्रकाशन, वाराणसी,2004, पृष्ठ5
[ix]A Time scale to indicate past time since an epoch is a calendar. - Upadhyaya, A.K.&Siddhantadarpana, Vol.-II, Nag Publishers, Delhi, 1998. pp. 261
[x]ओझा, मीठालाल हिम्मतराम, भारतीय कुण्डली विज्ञान, देवर्षि प्रकाशन, वाराणसी, 2004, पृ- 1
[xi]सूर्यसिद्धान्त; 14/12
[xii]प्रसाद, गोरख- भारतीय ज्योतिष का इतिहास, उत्तरप्रदेश हिन्दी संस्थान, उत्तरप्रदेश, पृष्ठ263
[xiii](i) ऋग्वेद; 8/6/30
(ii) वही; 8/48/7
[xiv]सूर्यसिद्धान्त; 11/1-2
[xv]सूर्यसिद्धान्त; 2/69
[xvi](i) ऋक्संहिता; 1/164/11
(ii) तैत्तिरीय संहिता; 1/4/14
[xvii]केतकीग्रहगणित; 1/1
[xviii]यात्रा विवाहोत्सवजातकादौ खेटैः स्फुटैरेव फलस्फुटत्वम्।
स्यात् प्रोच्यते तेन नभश्चराणां स्फुटक्रिया दृग्गणितैक्यकृद्या।। - सिद्धान्तशिरोमणि_ 3/2/70
[xix]चैत्रे मासि जगद् ब्रह्मा ससर्ज प्रथमेऽहनि।
शुक्ल पक्षे समग्रे तु तदा सुर्योदये सति।।- ब्रह्मपुराण